साहबजादा मोहम्मद कामगर शाह

बनाम

जगदीश चंद्र देव धबल देव

और अन्य।

(पी.बी. गजेन्द्रगढ़कर, के. एन. वांचू और

के. सी. दास गुप्ता, जे.जे.)

दस्तावेज़ की व्याख्या-पहले और बाद के भागों के बीच विसंगति-"विधिवत अधिकृत", जिसका अर्थ है - भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 (1908 का IX), स्पष्टीकरण II, धारा 19.

1900 में धालभूम संपत्ति के तत्कालीन मालिक, जो कि प्रथम प्रत्यर्थी के पूर्ववर्ती अधिकारी थे, ने एक राजकुमार मोहम्मद बख्तियार शाह को संपत्ति में कुछ धातुओं और खनिजों के खनन अधिकारों का स्थायी पट्टा दिया था। उक्त मालिक के जीवनकाल के दौरान संपत्ति का प्रबंधन छोटानागपुर भारग्रस्त संपदा अधिनियम के तहत सिंहभूम के उप आयोग ने अपने हाथ में ले लिया था और उनकी मृत्यु के बाद संपत्ति के प्रबंधक ने राजकुमार मोहम्मद बख्तियार शाह की संपत्ति के आधिकारिक रिसीवर को 1919 में उसी क्षेत्र में खनन अधिकारों के संबंध में एक और पट्टा दे दिया था। प्रथम प्रत्यर्थी ने राजकुमार मोहम्मद बख्तियार शाह की संपत्ति के उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों और अपीलकर्ता से भी उस संपत्ति के

रिसीवर के रूप में दूसरे पट्टे के आधार पर किराए और रॉयल्टी की वसूली के उद्देश्य से वर्तमान मुकदमे की शुरुआत की। मामले का निर्णय 1900 और 1919 के दो पट्टों की बनावट पर निर्भर था और ट्रायल कोर्ट और उच्च न्यायालय ने वादी प्रत्यर्थियों के पक्ष में मामले का फैसला किया। उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पर प्रतिवाद करने वाले प्रतिवादी अपीलार्थी की अपील पर।

निधार्रित किया गया, कि एक डिस्पोज़िटिव दस्तावेज़ के लिए पक्षकारों का इरादा पक्षकारों द्वारा स्वयं इस्तेमाल किए गए शब्दों से एकत्र किया जाना चाहिए और यह माना जाना चाहिए कि उन्होंने शब्दों का इस्तेमाल उनके सख्त व्याकरणिक अर्थों के अनुरूप ही उपयोग में लिया है। यदि दस्तावेज़ के पहले भाग में किए गए कथन बाद के भाग में किए गए कथनों से मेल नहीं खाते हैं, तो पहले वाला भाग मान्य होना चाहिए। अस्पष्टता के मामलों में अदालत को पक्षकारों के इरादे का पता लगाने के लिए दस्तावेज़ के सभी पहलुओं पर गौर करना चाहिए/यदि फिर भी अस्पष्टता बनी रहती है तो न्यायालय को दस्तावेज़ की व्याख्या सख्ती से अनुदानकर्ता के विरुद्ध और अनुदान प्राप्तकर्ता के पक्ष में करनी चाहिए।

परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के स्पष्टीकरण 2 के तहत "विधिवत अधिकृत शब्दों में" ऋणी पक्ष के कृत्य द्वारा विधिवत अधिकृत या कानून के बल पर या अदालत के आदेश द्वारा भी शामिल होगा।

अन्नापागोंडा बनाम संगडियप्पा, (1901) बोम्बे एल.आर.221 (एफ.बी.), रासबिहारी बनाम आनंद राम, 43 कलकत्ता 211, रामचरण दास बनाम गया प्रसाद, 30 अलाहाबाद 422, लक्ष्मणन बनाम सदयप्पा, ए.आई.आर. 1919, मद्रास 816 और थंकम्मा बनाम कुन्हम्मा, ए.आई.आर. 1919 मद्रास 370, स्वीकृत।

कुर्रिमभाई बनाम अहमदाली, 58 मुम्बई 505 और लक्ष्मणन चेट्टी बनाम सदयप्पा चेट्टी, 35 एम.एल.जे. 571, पर विचार किया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 81/1956

विशेष अधीनस्थ न्यायाधीश, चाईबासा, 1941 के मनी सूट संख्या 3 में दिनांक 31 अगस्त, 1946 को पारित फैसले और डिक्री से उत्पन्न मूल डिक्री संख्या 2 के विरुद्ध पटना उच्च न्यायालय में की गई प्रथम अपील में दिनांक 24 सितंबर, 1952 को पारित निर्णय और डिक्री की अपील।

एल.के.झा, बी.के.सरन, एस.टी.हुसैन, एस.के.झा और के.एल.मेहता, अपीलार्थी की ओर से।

एच. एन. सान्याल, अतिरिक्त सॉलिसिटर-भारत के जनरल जे. सी. दास गुप्ता और आर. सी. प्रसाद, प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से दिनांक 21 अप्रैल 1960। न्यायालय का निर्णय दास गुप्ता, जे. द्वारा पारित किया गया।

धालभूम एस्टेट जो कि एक 1,000 वर्ग मील से अधिक क्षेत्र में फैला हआ है और आंशिक रूप से मिदनापुर जिले में और आंशिक रूप से सिंहभूम जिले में स्थित है, वह खनिजों से समृद्ध है। 1900 में इस संपत्ति के तत्कालीन मालिक राजा सत्रुघन देव धबल देव, जो प्रथम प्रत्यर्थी जगदीश देव के पूर्ववर्ती हितधारक थे, ने जिला 24-परगना में स्थित इस संपत्ति में कुछ धातुओं और खनिजों के लिए खनन अधिकारों का स्थायी पट्टा टॉलीगंज के राजकुमार मोहम्मद बख्तियार शाह को दिया था। राजा शत्रुघ्न देव धबल देव की 1916 में मृत्यु हो गई। हालांकि, उनकी मृत्यु से पहले, संपत्ति का प्रबंधन छोटानागपुर भारग्रस्त संपदा अधिनियम के तहत सिंहभूम के उपायुक्त ने अपने हाथ में ले लिया था।इस तरह के प्रबंधन के दौरान एस्टेट के प्रबंधक ने 1 सितंबर, 1919 को प्रिंस मोहम्मद बख्तियार शाह की संपत्ति के आधिकारिक रिसीवर को उसी क्षेत्र में खनन अधिकारों के संबंध में एक और पट्टा प्रदान किया। वर्तमान मुकदमा प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा प्रिंस मोहम्मद बख्तियार शाह की संपत्ति के उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों से और उस संपत्ति के रिसीवर वर्तमान अपीलकर्ता से दूसरे पट्टे के आधार पर किराए और रॉयल्टी की वसूली के उद्देश्य से शुरू किया गया था। पट्टे की शर्तों के तहत पट्टेदार किराए और रॉयल्टी और पट्टे पर दिए गए खनिजों के संबंध में अन्य आय के कारण प्राप्तियों के आधे हिस्से का हकदार है और सटीक आय तब तक ज्ञात नहीं हो सकती जब तक कि पट्टेदार द्वारा खाते प्रस्तुत नहीं किए जाते' प्रतिवादी ने 1

जनवरी 1926 से खातों के लिए एक डिक्री और ऐसे खातों पर देय राशि के लिए एक डिक्री के लिए प्रार्थना की। चूंकि मुकदमा 12 अगस्त, 1941 को लाया गया था, इसलिए 12 अगस्त, 1935 से पहले की अवधि, प्रथम दृष्टया परिसीमा अधिनियम द्वारा वर्जित होगी। वादी के अनुसार, संपत्ति के तत्कालीन रिसीवर द्वारा समय-समय पर की गई स्वीकृतियों के कारण परिसीमा की अवधि सुरक्षित थी। रिसीवर द्वारा दो बचाव उठाए गए थे जो कि एकमात्र प्रतिस्पर्धी प्रतिवादी था। पहला यह था कि पट्टेदार ने उसे पट्टे की संपत्ति के हिस्से से बेदखल कर दिया था और इसलिए किराए और रॉयल्टी का पूर्ण निलंबन होना चाहिए। दूसरा बचाव 12 अगस्त, 1935 से पहले की अवधि के दावे के संबंध में था। उनके द्वारा यह दलील दी गई थी कि जिन पत्रों में दायित्व स्वीकार करने का दावा किया गया है, वे कानून के अनुसार दायित्व की स्वीकृति के बराबर नहीं हैं और साथ ही वैसे भी चूंकि रिसीवर अदालत का एजेंट था व पक्षकारों का एजेंट नहीं था तो ऐसे में किसी भी प्रकार से कथित स्वीकारोक्ति परिसीमा अवधि सुरक्षित रखने में उपयोगी नहीं होगी।

हालाँकि लिखित बयान में पट्टेदार की संपत्ति से बेदखली की प्रकृति का उल्लेख नहीं किया गया था, लेकिन मुकदमे में निश्चित मामला यह था कि यह बेदखली उन खनिजों के संबंध में थी जिन्हें विशेष रूप से 1900 के पूर्व पट्टे से बाहर रखा गया था, लेकिन प्रतिवादी के अनुसार उन्हें बाद के पट्टे में शामिल किया गया। अपील में मुख्य प्रश्नों में से एक यह है कि

क्या जिन खनिजों को विशेष रूप से पूर्व पट्टे की उपधारा 16 में शामिल नहीं किया गया था उन्हें 1919 में बाद के पट्टे द्वारा पट्टेदार को सौंप दिया गया था। ऐसे में जिन कई बिन्दओं को विरचित किया गया है, उनमें से अब हम इन दो बचावों के संबंध में केवल दो मुद्दों के बारे में ही चिंतित हैं। इनमें से पहला हैः "क्या प्रतिवादी किराए और रॉयल्टी के निलंबन का हकदार है जैसा कि दावा किया गया है "; दूसरा हैः"क्या वादी के दावे का कोई भी हिस्सा परिसीमा अधिनियम द्वारा वर्जित है? अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा 1919 के पट्टे की बनावट के सम्बन्ध में यह निर्धारित किया गया कि इसमें उन खनिजों को शामिल नहीं किया गया है जिन्हें विशेष रूप से पूवर् पट्टे की उपधारा 16 के तहत् बाहर रखा गया था और चूंकि पट्टे की संपत्ति से बेदखली का एकमात्र मामला इन खनिजों के संबंध में किया गया था, इसलिए किराए के निलंबन की याचिका विफल होनी चाहिए। उन्होंने परिसीमा की दलील को भी अस्वीकार कर दिया, यह मानते हुए कि आधिकारिक रिसीवर ऐसी स्वीकृतियाँ देने में सक्षम था और वास्तव में वादी की स्वीकृतियाँ परिसीमा अधिनियम के धारा 19 के भीतर थी, 1935 से 1941 तक की अवधि जिसके संबंध में परिसीमा का कोई प्रश्न नहीं उठता, अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा खातों को प्रस्तुत करने और आयुक्त द्वारा लेखांकन पर पाई जाने वाली राशि के भुगतान का आदेश दिया गया। उनके निष्कर्ष के आधार पर कि 67,459-3-3 कि राशि के दायित्व की स्वीकृति की गई थी जो कि वर्ष 1935 तक दो पट्टों की शर्तों

के तहत देय थी लेकिन यह पता लगाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं थी कि उस दूसरे पट्टे के आधार पर उस वर्ष तक कितनी राशि देय थी, उन्होंने निम्नलिखित शर्तों में आदेश दिया कि:

> " प्रतिवादी को 67,459-3-3 रुपये की उक्त राशि में से उनके कार्यालय के खातों के आधार पर पट्टे के तहत देय राशि का आकलन करने और बताने का निर्देश दिया गया.....इस तिथि से दो महीने के भीतर वादी की बकाया राशि के संबंध में, ऐसा न करने पर हिसाब-किताब लेने और वादी को देय राशि का पता लगाने के लिए एक आयुक्त नियुक्त किया जाएगा, और प्रतिवादी उस राशि के लिए उत्तरदायी होगा।"

इस डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादी, रिसीवर ने पटना उच्च न्यायालय में अपील की। अपीलीय न्यायालय के समक्ष दो मुद्दे उठाए गए। पहला यह था कि 1919 के पट्टे की उचित व्याख्या पर यह पाया जाना चाहिए कि पूर्व के पट्टे के खंड 16 में विशेष रूप से बाहर किए गए खनिजों को 1919 के पट्टे में शामिल किया गया था और परिणामस्वरूप, चूंकि पट्टादाता ने इन क्षेत्र में खनिजों के संबंध में अन्य पक्षों को कुछ पट्टे दिए थे मामले में पट्टेदार किराए के निलंबन का हकदार था। दूसरा मुद्दा जो उठाया गया वह यह था कि कानून में ऐसी कोई स्वीकृति नहीं थी जो

12 अगस्त, 1935 से पहले के दावे के संबंध में परिसीमा को सुरक्षित रख सकें।

अपील पर सुनवाई करने वाले पटना उच्च न्यायालय ने उक्त दोनों बिन्दुओं पर ट्रायल जज के निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की। पहले बिंदु पर उनका मानना था कि 1900 पट्टे के खंड 16 द्वारा बाहर किए गए खनिजों को दूसरे पट्टे में शामिल नहीं किया गया था और इसलिए किराए के निलंबन का कोई सवाल ही नहीं था। उन्होंने यह भी माना कि दस्तावेज़ की व्याख्या के सवाल के अलावा, पट्टेदार किराए के निलंबन का हकदार नहीं था जिससे कि किराए को रोकने को उचित ठहराया जा सके, मकान मालिक का कार्य जबरन या किसी भी स्थिति में, कपटपूर्ण हो और ये स्थितियाँ वर्तमान मामले में स्थापित नहीं की गई थीं। दूसरे प्रश्न पर, विद्वान न्यायाधीशों ने माना कि जिन पत्रों पर वादी रिसीवर द्वारा स्वीकृति दिये जाना दर्शित किये जाने हेतु निर्भर रहा गया था वे कानून के तहत बतौर स्वीकृति मान्य थे और स्वीकृतियां जो कि रिसीवर द्वारा दी गई थीं वह उसके स्वयं के वरिष्ठ मकान मालिक होने से धारा 19 परिसीमा अधिनियम के तहत सही स्वीकृतियाँ थीं। तदनुसार उनके द्वारा अपील खारिज की गईं।

वर्तमान अपील प्रतिस्पर्धी प्रतिवादी रिसीवर द्वारा संविधान के अनुच्छेद 133 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा जारी प्रमाण-पत्र के आधार पर लाई गई है।

अपीलीय न्यायालय में उठाए गए दोनों बचाव हमारे सामने रखे गए हैं। कथित बेदखली, जिसके आधार पर लगान के निलंबन के अधिकार के पहले बचाव का आग्रह किया गया है, केवल पूर्व के 1900 के खंड 16 के पट्टे के में विशेष रूप से उल्लिखित खनिजों के संबंध में है। इसलिए सबसे पहले यह तय करना आवश्यक है कि क्या पूर्व पट्टे की खण्ड 16 में उल्लेखित खनिजों को दूसरे पट्टे में सम्मिलित किया गया है। यदि नीचे की अदालतों की तरह यह पाया गया कि उन्हें शामिल नहीं किया गया है तो निलंबन का कोई सवाल ही नहीं उठेगा। यदि उन्हें शामिल किया गया है, तो यह निर्णय लेने में कानून और तथ्य के कुछ अन्य प्रश्नों पर विचार करना पड़ सकता है कि प्रतिवादी की किराया निलंबित करने की याचिका सफल हो सकती है या नहीं। हालांकि मुख्य रूप से हमें ऊपर बताए गए प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए 1919 के पट्टे को समझना होगा, उसी उद्देश्य के लिए 1900 के पूर्व पट्टे के कई हिस्सों को संदर्भित करना आवश्यक होगा। 1900 के पट्टे के ऑपरेटिव हिस्से में सबसे पहला खंड इन शब्दों में है:-

"कि आप सोना, चांदी, तांबा, सीसा, जस्ता, लोहा, पारा, अभ्रक, सल्फर, कॉपर सल्फेट, कोयला, चाक, लाल पत्थर, आदि, माटी स्लेट पत्थर और सभी प्रकार के कीमती पत्थरों जैसे कि हीरे, माणिक, पन्ना, पुखराज, क्रिस्टल आदि जो कि सतह पर पडे होते हैं और घाटशिला की उप-मिट्टी जिसे अन्यथा परगना धालभूम कहा जाता है जो कि अनसूची में उल्लिखित है, मौजा नरसिंहगढ़ और घाटशिला और डिबकुलियों जो नीचे दी गई अनुसूची में उल्लिखित है को छोड़कर, उन वस्तुओं की खोज, पालन, शुद्धिकरण, पिघलना और बिक्री करेंगे।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस धारा में पत्थर, चूना-पत्थर, घुटिंग अथवा गिट्टी का उल्लेख नहीं है। हालाँकि, पट्टे के खंड 6 में यह प्रावधान है कि पट्टेदार "पत्थर, चूना-पत्थर, घुटिंग और गिट्टी जो कि भवन, बंगले और रास्ते आदि के निर्माण के लिए आवश्यक हो सकते हैं, जो कि उपरोक्त खनन कार्य के लिए आवश्यक है उन्हें निःशुल्क और बिना किराये के लेने के लिए सक्षम होगा।" पट्टे के खंड 16 में इस संबंध में कुछ और प्रावधान हैं जो इन शब्दों में हैं:-

"उपरोक्त पट्टे के आधार पर, आप मुझे या मेरे किसी भी अधिकृत व्यक्ति को पत्थर उठाने में कोई बाधा उत्पन्न करने में सक्षम नहीं होंगे (जिनका इस्तेमाल किया जाता है) बर्तनों या पत्थरों, चूना-पत्थर और घुटिंग आदि के लिए, इमारतों जो इस पट्टे के अंतर्गत नहीं आती हैं और

उन्हें मुझे या मेरे अधीन किरायेदारों आदि को बेचने, बांध, टैंक, नहर और कुएं खोदने के लिए आदि, लेकिन उक्त पट्टे की शर्तें उक्त कुओं आदि के नीचे पड़े भूमिगत खनिजों आदि के संबंध में लागू होंगी।

इस दस्तावेज़ से दो बातें बिल्कुल स्पष्ट हैं:-(1) कि खनन अधिकार विशेष रूप से सोना, चांदी, तांबा सीसा, जस्ता, लोहा, पारा, अभ्रक सल्फर, कॉपर सल्फेट, कोयला, चाक, लाल मिट्टी और कुछ कीमती पत्थर जैसे हीरा, माणिक, पन्ना, पुखराज, क्रिस्टल आदि के संबंध में दिए गए थे। और (2) बर्तनों या पत्थरों के लिए पत्थर, चूना पत्थर, घुटिंग, आदि और इमारतों के लिए गिट्टी को विशेष रूप से पट्टे से बाहर रखा गया था। 1919 के बाद के पट्टे द्वारा पट्टेदार ने कुछ खनिजों के संबंध में खनन अधिकार दिए और पट्टेदार ने खनन अधिकार प्राप्त कर लिए जो पहले पट्टे द्वारा प्रदान नहीं किए गए थे। प्रश्न यह है कि क्या बाद के पट्टे द्वारा जो प्रदान किया गया था उसमें उन चीज़ों के अलावा जिनका पहले अनुदान में विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया था, वे चीज़ें भी शामिल थीं जिन्हें विशेष रूप से वहां से बाहर रखा गया था। बाद के पट्टे के ऑपरेटिव क्लॉज का महत्वपूर्ण हिस्सा इन शब्दों में है:

"आरक्षित किराए और इसके बाद की संविदाओं और शर्तों को ध्यान में रखते हुए, प्रबंधक ने रिसीवर को प्रत्येक और सभी धातुओं और खनिज

जो कि किसी भी प्रकार या विवरण के हों, को हस्तांतरित कर दिया सिवाय उनके जो कि मुख्य पट्टे में विशेष रूप से शामिल और प्रदान की गई हैं

उक्त उद्देश्य हेतु प्रधान पट्टे द्वारा उक्त प्रिंस मोहम्मद बख्तियार शाह को दिए गए अधिकार, विशेषाधिकार और शक्तियां सभी मामलों में इस तरह से दोहराए गए थे जिससे कि वे इसमें शामिल किसी भी प्रावधान का खंडन नहीं करते हों और अभी भी मौजूद और प्रभावी होने में सक्षम हों।"

अनुबंध इस प्रकार है:-

> "रिसीवर प्रबंधक के साथ अनुबंध करता है कि वह उक्त मूल पट्टे में दिए गए समय और तरीके से किराए या रॉयल्टी का भुगतान करेगा और उक्त मूल पट्टे में शामिल सभी प्रावधानों और शर्तों का पालन करेगा जितना वे इन उपहारों पर उसी तरह लागू होती हों जैसे कि पहले से ही उन्हें यहां डाला गया हो।"

दस्तावेज़ में आगे एक समझौता शामिल है कि रिसीवर कुछ शर्तों और प्रावधानों के अधीन अंडर-लीज देने के लिए स्वतंत्र होगा। उल्लिखित शर्तों में से एक है - "ऐसे सभी अंडरलीज़ विशिष्ट खनिजों के संबंध में ऐसी विशेष शर्तों के अधीन होंगे जो समय-समय पर खनन पट्टों से संबंधित

सरकारी नियमों द्वारा निर्धारित किए जाएंगे और मूल पट्टे के खंड 16 के प्रावधान के अधीन होंगे।"

उक्त पट्टा इन शब्दों के साथ समाप्त हुआ:----

"परन्तु हमेशा और यह स्वीकर्त रहेगा कि इसमें शामिल किसी भी चीज़ को यह दिखाने के लिए नहीं माना जाएगा कि एक हजार नौ सौ जनवरी के दसवें दिन का मृतक गोपीनाथ देव धबल देव के पुत्र राजा शत्रुघ्न देव धबल देव और 'मृतक प्रिंस मोहम्मद अनवर शाह के बेटे माननीय प्रिंस मोहम्मद बख्तियार शाह के बीच जो पोट्टा हुआ था वह अभी भी वैध नहीं हैं और प्रचलित नहीं हैं।"

यह स्थापित करने के अपने प्रयास में कि इस बाद के पट्टे के द्वारा पट्टादाता ने उन खनिजों का भी पट्टा दिया, जिन्हें पूर्व पट्टे के खंड 16 द्वारा विशेष रूप से बाहर रखा गया था, श्री झा ने अपनी सहायता में व्याख्या के कई अच्छे स्थापित सिद्धांतों को शामिल किया है। इनमें से पहला यह है कि अनुदान के दस्तावेज़ में पार्टियों के इरादे को सबसे पहले डिस्पोजीशन क्लॉज में इस्तेमाल किए गए शब्दों से पता लगाया जाना चाहिए, उनके सख्त, प्राकृतिक व्याकरणिक अर्थ के अनुसार इस्तेमाल किए गए शब्दों को समझना चाहिए और एक बार यदि डिस्पोजीशन क्लॉज में वर्णति शब्दों से आशय स्पष्ट हो जाता है तो

न्यायालयों द्वारा यह जांच करना आवश्यक नहीं है कि पक्षकारों द्वारा दस्तावेज़ के अन्य हिस्सों में क्या कहा होगा। आगे यह आग्रह किया जाता है कि यदि ऐसा प्रतीत होता है कि दस्तावेज़ के बाद के खंड किसी भी तरह से संपत्ति के विक्री करने से सम्बंधित पहले खंड के प्रभाव को प्रतिबंधित या कम करते हों तो पहले वाला खंड प्रबल रहेगा। तीसरा यह कहा जाता है कि यदि स्वयं डिस्पोजीशन क्लॉज में कोई अस्पष्टता है, तो उस अस्पष्टता का लाभ अनुदान प्राप्तकर्ता को दिया जाना चाहिए, चूंकि नियम यह है कि अनुदान के सभी दस्तावेजों की व्याख्या अनुदानकर्ता के विरुद्ध सख्ती से की जानी चाहिए। अंत में यह आग्रह किया गया कि जहां दस्तावेज़ के सक्रिय भाग की व्याख्या प्रस्तावना की सहायता के बिना की जा सकती है, वहां प्रस्तावना पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए।

किसी भी विस्तृत चर्चा को उचित ठहराने के लिए इन सिद्धांतों की शुद्धता दृष्टान्तों द्वारा बहुत अच्छी तरह से स्थापित की गई है। पक्षकारों के इरादे का पता लगाने हेतु, प्रकरणों में यह निर्धारित किया गया है कि पक्षकारों द्वारा इस्तेमाल किए गए शब्दों से उस आशय को एकत्रित किया जाना चाहिए। ऐसा करने के लिए यह माना जाना चाहिए कि पार्टियों ने शब्दों का उपयोग उनके सख्त व्याकरणिक अर्थ के अनुसार ही किया गया है। यदि और जब पक्षकार पहले खुद को एक तरह से अभिव्यक्त करते हैं और फिर कुछ और कहते हैं जो कि पहले जो कहा गया है, उससे असंगत है, तो अदालतों ने इस मत पर यह सिद्धांत विकसित किया है कि जिसे

एक बार दे दिया गया है उसे वापस नहीं लिया जा सकता है, कि पहले के खंड द्वारा स्पष्ट डिस्पोजिशन को बाद के खंड द्वारा समाप्त करने की अनुमति नहीं दी जाएगी। जहां अस्पष्टता है, वहां अदालत का कर्तव्य है कि वह दस्तावेज़ के सभी हिस्सों को देखे ताकि यह पता लगाया जा सके कि पक्षों का वास्तव में क्या आशय था। लेकिन यहां भी इस नियम को ध्यान में रखना होगा कि दस्तावेज़ जो कि अनुदानकर्ता का दस्तावेज़ है, इसकी व्याख्या सख्ती से उसके विरुद्ध और अनुदान प्राप्तकर्ता के पक्ष में की जानी चाहिए।

इन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए अब हम पार्टियों के आशय का पता लगाने के लिए 1919 के पट्टे की जांच करेंगे कि इस पट्टे द्वारा क्या दिया जा रहा था। डिस्पोजिशन क्लॉज जैसा कि पहले ही निर्धारित किया जा चुका है, इन शब्दों में है: - "इस प्रकार से प्रबंधक द्वारा रिसीवर को प्रत्येक और सभी धातुओं और खनिज जो कि किसी भी प्रकार या विवरण के हों, को हस्तांतरित कर दिया सिवाय उनके जो कि मुख्य पट्टे में विशेष रूप से शामिल और प्रदान की गई हैं" अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि यदि क्षेत्र में धातुओं और खनिजों की समग्रता को प्रतीक "X" द्वारा दर्शाया जाता है और जो पहले पट्टे द्वारा प्रदान किया गया था उसे प्रतीक "Y" द्वारा दर्शाया जाता है, तो ऐसे में पक्षकारों का आशय उपर्युक्त निधारित शब्दों के सम्बन्ध में यह माना जायेगा कि यह पट्टा "X" माइनस "Y" के संबंध में किया गया है। हालाँकि हमें डर है कि

यह समस्या का अति-सरलीकरण है जिसका हमें विरोध करना चाहिए। हालाँकि यह सच है कि शब्दों के सख्त व्याकरणिक अर्थ पर ही प्रभाव दिया जाना चाहिए, परन्तु शब्दों और वाक्यांशों का उपयोग लोगों द्वारा हमेशा और हमेशा एक ही अर्थ में नहीं किया जाता है। जैसा कि प्रख्यात न्यायाधीशों द्वारा अक्सर इस बात पर जोर दिया गया है कि पक्षकारों द्वारा उपयोग किए गए किन्हीं शब्दों का आशय उन शब्दों को संक्षेप में लेकर नहीं लगाया जा सकता है। जब इस पट्टे में अनुदानकर्ता ने कुछ शब्दों का उपयोग किया था, तो हम इसे नजर अंदाज नहीं कर सकते हैं कि जब ऊपर निर्धारित शब्दों का उपयोग वर्तमान पट्टे में किया गया था, तो दोनों पक्षों के दिमाग में मूल पट्टे के तथ्य को विद्यमान थे। वे न केवल पूर्व पट्टे के तथ्य से भली-भांति परिचित थे, बल्कि उनके द्वारा इसे मुख्य पट्टे के रूप में संदर्भित किया गया और बार-बार इस तथ्य पर जोर दिया गया कि मूल पट्टे के नियम और शर्तों में जहां तक वर्तमान पट्टे का खंडन नहीं किया गया है, वे वैध और असरदार रहेंगी। उस पूर्व पट्टे के प्रमुख तथ्यों में से एक यह है कि जबकि कुछ धातुओं और खनिजों को विशेष रूप से प्रदान किया गया था, कुछ को विशेष रूप से बाहर रखा गया था। डिस्पोजिशन क्लॉज में वर्णित शब्दों की व्याख्या करते समय हमें इस तथ्य पर ध्यान देना होगा कि विशिष्ट बहिष्करण के उस तथ्य का कोई संदर्भ नहीं दिया गया है। निर्धारण हेतु यह प्रश्न उठता है कि क्या पिछले पट्टे के बहिष्करण खंड का विशिष्ट संदर्भ देने की इस चूक से पक्षकारों का

यह आशय था कि बहिष्करण खंड का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अपीलकर्ता का तर्क यह है कि "रिसीवर को हस्तांतरित की गई प्रत्येक और सभी धातु और खनिज जो कि किसी भी प्रकार या विवरण की हैं, सिवाय उनके जो कि मुख्य पट्टे में विशेष रूप से शामिल और प्रदान की गई हैं" इन शब्दों का बांछित परिणाम यह है कि पूर्व पट्टे के बहिष्करण खंड स्वयं को ही बाहर रखा जाना है। हालांकि अगर हम आगे नहीं देखते हैं, ताे इस व्याख्या के लिए कुछ गुंजाइश है, परन्तु हम विद्वान वकील से सहमत होने में असमर्थ हैं कि यह स्पष्ट और जाहिर है कि पूर्व पट्टे के अनुदान खंड को इस प्रकार संदर्भ संदर्भित करने से उसके संबंध में इस्तेमाल किए गए शब्दों से, पूर्व पट्टे के बहिष्करण खंड को आवश्यक रूप से बाहर रखा जा रहा था। हमारी राय में इस बात पर बहस करने की उतनी ही गुंजाइश है कि बहिष्करण खंड उक्त संदर्भ के अनुरूप नहीं होने के कारण वैध और सक्रिय रहेगा, जैसा कि अपीलकर्ता का तर्क है कि इस्तेमाल किए गए शब्द बहिष्करण खंड को बाहर करने का आशय दर्शित करते हैं। अस्पष्टता के मामलों में यह आवश्यक और उचित है कि अदालत जिसका काम दस्तावेज़ की व्याख्या करना है, उसे दस्तावेज़ के कई हिस्सों की जांच करनी चाहिए ताकि यह पता लगाया जा सके कि पक्षकारों का वास्तव में क्या आशय था। इस संबंध में उप-पट्टा देने हेतु पट्टे द्वारा लगाई गई शर्तों की चौथी शर्त से काफी सहायता प्राप्त की जा सकती है। इस शर्त में अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान किया गया है कि पट्टेदार द्वारा दिए जाने वाले

ऐसे सभी अंडर-पट्टे मूल पट्टे के खंड 16 के प्रावधानों के अधीन होंगे। दूसरे शब्दों में, उप-पट्टेदार मुख्य पट्टादाता या उसके द्वारा अधिकृत किसी अन्य व्यक्ति को इमारतों के लिए बर्तन या पत्थर या चूना-पत्थर और घुटिंग आदि के लिए पत्थर उठाने और बेचने में कोई बाधा उत्पन्न करने में सक्षम नहीं होंगे। ना ही वह पट्टेदार द्वारा अधिकृत किसी भी व्यक्ति को बंधी, तालाब, नहर और कुएं आदि खोदने में कोई बाधा डालने में सक्षम होगा। वास्तव में यह प्रावधान केवल अंडर-लीजऑन के संबंध में है। लेकिन मन में यह सवाल उठता है कि अंडर-पट्टेदारों पर ऐसी शर्त अधिरोपित किये जाने का क्या अर्थ हो सकता है, यदि जब तक अंडर-पट्टा नहीं दिया जाता है, तब तक पट्टेदार स्वयं ही मूल पट्टे के खंड 16 के प्रावधानों से बाध्य नहीं होगा और मुख्य पट्टा को खंड 16 में वर्णित कई मामलों में बाधा डालने में सक्षम होगा। हमारी राय में यह अकल्पनीय है कि इस चौथे खंड जैसा कोई खंड उप-पट्टेदारों के संबंध में शामिल किया जाएगा, जब तक कि पक्षकारों का यह आशय न हो कि पट्टेदार स्वयं मूल पट्टे के खण्ड 16 के प्रावधानों से बाध्य होगा। यह विचार कि यही आशय रहा होगा, इस पट्टे के अंतिम शब्दों से भी मजबूत होता है, जो सारता प्रदान करता है कि बाद के पट्टे में कुछ भी वर्णित होने के बावजूद मुख्य पट्टा वैध और अस्तित्व में रहेगा। यहां यह भी कहने का कोई मतलब नहीं होगा कि मुख्य पट्टा वैध होगा और केवल उन खनिजों के संबंध में अस्तित्व में रहेगा जो विशेष रूप से 'मुख्य पट्टे द्वारा प्रदान किए गए थे।

जहां तक उन खनिजों के संबंध में मुख्य पट्टे के बाध्यकारी होने का संबंध है, इसमें कोई संदेह नहीं है और 1919 पट्टे का अंतिम खंड अनावश्यक और अर्थहीन होगा। जहां तक उन धातुओं और खनिजों का संबंध है जिन्हें खण्ड 16 द्वारा बाहर रखा गया है वहां पर हालाँकि इस बात पर बहस की कुछ गुंजाइश हो सकती है कि क्या प्रबल रहेगा। लेकिन शायद खंड 16 के कारण अनुदानकर्ता के मन में कुछ आशंका हो कि पूर्व पट्टे के खण्ड 16 में उल्लिखित धातुओं और खनिजों के संबंध में कुछ अंतर की गुंजाइश हो सकती है, इस खंड को स्वयं मूल पट्टे में शामिल करना शायद अनावश्यक होगा। यह उस अनिश्चितता के विरुद्ध सुरक्षा के रूप में था कि बाद के पट्टे के अंतिम वाक्य में उन शब्दों का उपयोग किया गया है जो हमें मिलता हैं।

इसलिए हमें यह मानना उचित प्रतीत होता है कि डिस्पोजिशन क्लॉज में वर्णित शब्द जो दो अर्थ देने में सक्षम हैं, वह अर्थ कि पक्षकारों का आशय था कि मूल पट्टे के खंड 16 द्वारा बाहर किए गए खनिजों कि वर्तमान अनुदान में भी सम्मिलित नहीं किए गए हैं, वे बहिष्कृत ही रहेंगे, स्वीकार किया जाना चाहिए।

हमने अब तक दस्तावेज़ की प्रस्तावना का उल्लेख नहीं किया है। इसका प्रासंगिक भाग जो हमारे समक्ष प्रस्तुत दस्तावेज की व्याख्या करने में कुछ सहायता करता है, वहां पाया जाता है। जहां प्रबंधक इस बाद के

पट्टे के संबंध में उच्च न्यायालय की सहमति का उल्लेख करता है। परिच्छेद इस प्रकार है:

> "जबकि हाल ही में कथित श्री श्री शत्रुघ्न देव धबल देब की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रबंधक और कथित राजकुमार मोहम्मद बख्तियार शाह की संपत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाले रिसीवर के बीच मूल पट्टे की व्याख्या और इसमें शामिल खनिज के संबंध में कुछ विवाद उत्पन्न हुए हैं, और जबकि ऐसे सभी विवादों और मतभेदों को समाप्त करने के लिए और मुकदमेबाजी और परिणामतः दोनों संपत्तियों के नुकसान को रोकने के उद्देश्य से पार्टियों द्वारा और उनके बीच उक्त उच्च न्यायालय की मंजूरी और सहमति के अधीन इस पर सहमति व्यक्त की गई है और कि प्रबंधक रिसीवर को उक्त मुख्य पट्टे में विशेष रूप से उल्लिखित खनिजों के अलावा सभी खनिजों का पट्टा देगा।"

ट्रायल कोर्ट के फैसले में एक कथन किया गया है कि मुख्य पट्टे की व्याख्या के सम्बन्ध में जो विवाद उत्पन्न हुआ वह यह था कि क्या वोल्फ्राम नामक खनिज को 1900 के पट्टे में शामिल किया गया था या नहीं। स्पष्ट रूप से बार में दिए गए कथनों पर आधारित ट्रायल कोर्ट के फैसले में इस टिप्पणी की सत्यता पर हमारे सामने कोई विवाद नहीं हुआ

है। यदि यह विवाद होता तो दूसरे पट्टे का उद्देश्य स्पष्ट रूप से उसमें पहले पट्टे के अनुदान खंड के प्रयोजनों के संबंध में उन खनिजों को भी शामिल करना होता जिन्हें शामिल नहीं किया गया था। यह विवाद उस प्रकृति का रहा होगा, जैसा कि ट्रायल कोर्ट का मानना है कि प्रस्तावना में "विशेष रूप से उल्लिखित शब्दों के अलावा" शब्दों के उपयोग से भी यह संभावित प्रतीत होता है। विवाद इस सवाल पर था कि अनुदान खंड में क्या उल्लेख किया गया था और क्या उल्लेख नहीं किया गया था, दूसरा पट्टा देने का उद्देश्य यह था कि जो अनुदान खंड में इतने लंबे समय तक उल्लेख नहीं किया गया था उसे भी एक पूरक पट्टे द्वारा ऐसे अनुदान में शामिल किया जाएगा। क्या बाहर रखा गया इसका प्रश्न पार्टियों के विचार में ही नहीं था। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि इस बात का कोई सबूत नहीं था कि दूसरे पट्टे की तारीख से पहले, बहिष्करण खंड, अर्थात खंड 16 के संचालन के संबंध में कोई विवाद उत्पन्न हुआ हो। इसलिए प्रस्तावना पर विचार इस निष्कर्ष को और मजबूत करता है कि उक्त बाद के पट्टे द्वारा किसी भी खनिज अधिकार को प्रदान नहीं किया जिसे मुख्य पट्टे के 16 वें खंड द्वारा बाहर रखा गया था।

यदि हम दूसरे पट्टे में डिस्पोजिशन क्लॉज की इस तरह से व्याख्या करते हैं, जैसा कि हम सोचते हैं कि हमें करना चाहिए, तो इस खंड और बाद के खंडों के बीच कोई प्रतिकूलता नहीं है और श्री झा द्वारा निर्भर किए गए सिद्धांत की प्रयोज्यता के लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि यदि

किसी विलेख में दो खंड या भाग हों, जिनमें से एक दूसरे के प्रतिकूल हो, तो पहला भाग स्वीकार कर लिया जाएगा और दूसरा भाग अस्वीकार कर दिया जाएगा। न ही वर्तमान मामले में अनुदान देने वाले के खिलाफ शब्दों का कड़ाई से अर्थ लगाए जाने का कोई सवाल है। यह केवल तभी होगा जब अर्थ अन्यथा स्पष्ट न हो कि अदालतें उस नियम का सहारा लेकर अनुदान प्राप्तकर्ता को कुछ ऐसा देंगी जो उसे स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं हुआ होता। हालाँकि समग्र रूप से दस्तावेज़ कि उचित व्याख्या पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पक्षकारों का आशय स्पष्ट रूप से स्थापित हो गया है कि मुख्य पट्टे के खंड 16 द्वारा बाहर किए गए खनिजों को बाद के पट्टे से भी बाहर रखा जाएगा, वहाँ इस नियम के कारण पट्टेदार को कोई लाभ मिलने की कोई गुंजाइश नहीं है कि सभी कार्य सख्ती से अनुदानकर्ता के विरुद्ध और अनुदान प्राप्तकर्ता के पक्ष में किए जाने चाहिए।

इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि नीचे दी गई अदालतें अपने निष्कर्ष पर सही थीं कि मुख्य पट्टे के खंड 16 में उल्लिखित खनिज बाद के पट्टे द्वारा भी प्रदान नहीं किए गए थे।

इसलिए अपीलकर्ता की किराए को निलंबित करने की याचिका जो कि इस आरोप पर आधारित है कि मूल पट्टे के खंड 16 में उल्लिखित धातुएं और खनिज को बाद के पट्टे में सम्मिलित किया गया था, उसे

विफल होना चाहिए। हमें लगता है कि इस अपील में इस सवाल पर विचार करना अनावश्यक है कि क्या अपीलकर्ता जो व्याख्या दस्तावेज कराना चाहता था वह यदि सही होती तो किराए के निलंबन की दलील उसके पास उपलब्ध होती और हम उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त विचारों की शुद्धता या अन्यथा पर कोई राय व्यक्त नहीं करना चाहते हैं जो उन परिस्थितियों के संबंध में हैं जिनमें किराए के निलंबन की याचिका सफल हो सकती है।

12 अगस्त, 1935 से पहले दावे की अवधि के संबंध में परिसीमा का प्रश्न अभी भी विचाराधीन है। इस बिंदु पर अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने हमारे सामने दोतरफा तर्क प्रस्तुत किया है।

सबसे पहले उन्होंने तर्क दिया है कि कथित स्वीकृतियाँ सशर्त थीं, शर्त यह थी कि पत्रों के साथ संलग्न खाते के विवरण जिन्हें स्वीकृतियाँ माना गया है, उन्हें सही माना जाना चाहिए। अपने तर्क के समर्थन में श्री झा ने हमारा ध्यान 7 मार्च 1931 के प्रदर्श 2(1) में प्रयुक्त शब्दों की ओर आकर्षित किया, जो वादी द्वारा निर्भर किए गए अन्य पत्रों में स्वीकृतियों की प्रकृति को दर्शाता है। आधिकारिक रिसीवर द्वारा राजा जगदीश देव धबल देव को संबोधित यह पत्र इन शब्दों में है:-

"सर,

मुझे खाते के दो विवरण भेजने का सम्मान मिला है, जिसमें धालभूम राज को 1 जनवरी से 31 दिसंबर, 1930 तक रॉयल्टी के रूप में

कुल 4,993-6-1 रुपये की राशि देय होना दर्शाई गई है। आपके उक्त कथनों को सही मानने पर 4,993-6-1 रुपये की उक्त राशि का चेक आपको भेजा जाएगा।

उपरोक्त के अलावा, धालभूम राज के खाते में 31,944-8-3 रुपये की राशि दिसंबर, 1929 के अंत तक कि रॉयल्टी होने से पड़ी हुई है। यदि आप कृपया मुझे बताएंगे कि क्या आप इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हैं तो मैं आपका आभारी रहूंगा और आपकी बात सुनकर मुझे इस भुगतान हेतु आपको एक चेक भेजने में खुशी होगी।"

श्री झा के अनुसार 1 जनवरी से 31 दिसंबर, 1930 तक धालभूम राज को उपरोक्त संपत्ति से 4,993-6-1 रुपये राशि बकाया होने के संबंध में किया गया पहला कथन बकाया राशि का स्पष्ट और स्वतंत्र विवरण नहीं था, बल्कि इस शर्त के अधीन किया गया था कि इसे सही माना जाए। इसी तरह उन्होंने तर्क दिया कि पत्र के अगले पैराग्राफ में दिसंबर, 1929 के अंत तक रॉयल्टी की राशि 31,944-8-3 रुपये होने के संबंध में किया गया कथन भी जो देय है उसका एक स्पष्ट और स्वतंत्र विवरण नहीं था बल्कि उसी की स्वीकृति के अधीन किया गया था। जो हमारी राय में पत्र में जो कहा गया है उसका उचित अर्थ नहीं है। पत्र के पहले ही वाक्य में प्राप्तकर्ता कह रहा है कि 4,993-6-1 रुपये की राशि जो कि दस्तावेज़ के संलग्नक में दिखाई गई है, वह उसके अनुसार रॉयल्टी के मद्दे वर्ष 1930

के लिए धालभूम राज को देय थी इसमें वह दूसरे वाक्य में एक कथा यह भी जोड़ रहा था कि जैसे ही बकाया राशि का यह विवरण सही मान लिया जाएगा, उसके भुगतान का चेक भेज दिया जाएगा। हालाँकि ऐसा कहने का मतलब यह नहीं है कि देय राशि का पूर्व विवरण खातों की स्वीकृति के अधीन है। दूसरे वाक्य में विचार स्पष्ट रूप से यह था कि यदि देय राशि के विवरण को सही नहीं माना जाता है तो भुगतान करने से पहले मामले पर आगे चर्चा करके निर्णय लेना होगा। इस दूसरे वाक्य को किसी भी तरह से पहले वाक्य में दिए गए कथन की शर्त के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है। इसी प्रकार पत्र के दूसरे पैराग्राफ में पहला वाक्य जो कि 31,944-8-3 रुपये की राशि के दिसंबर, 1929 के अंत तक की रॉयल्टी होेने के संबंध में है, जैसा कि पत्र पढने से प्रतीत होता है कि यह उक्त वाक्य में कही गई बातों से स्वतंत्र है और उसके अधीन नहीं है। इसलिए यह तर्क कि ये स्वीकृतियाँ सशर्त स्वीकृतियाँ थीं, उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से खारिज किया गया है।

विद्वान वकील द्वारा किया गया दूसरा तर्क यह है कि किसी भी प्रकार से किसी संपत्ति के रिसीवर द्वारा की गई स्वीकृति, संपत्ति के मालिकों के एजेंट द्वारा दी गई स्वीकृति नहीं है जो कि परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के स्पष्टीकरण-॥ के तहत् "इस संबंध में विधिवत अधिकृत" के अर्थ के भीतर आती हो और इस प्रकार से वह परिसीमा अधिनियम की धारा 19(1) के तहत् कोई स्वीकृति नहीं है

विद्वान वकील के अनुसार परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के द्वितीय स्पष्टीकरण के तहत "इस संबंध में विधिवत अधिकृत" का अर्थ है "देनदार द्वारा विधिवत अधिकृत" और इसमें कानून द्वारा या न्यायालय के आदेश द्वारा विधिवत अधिकृत शामिल नहीं है। परन्तु इस प्रस्ताव के लिए हमें किसी दृष्टान्तों या सिद्धांत से कोई समर्थन नहीं मिलता है। परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के स्पष्टीकरण द्वितीय के अनुसार "इस धारा के प्रयोजनों के लिए 'हस्ताक्षरित' का अर्थ व्यक्तिगत रूप से या इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी एजेंट द्वारा हस्ताक्षरित से है" और इसमें किसी भी तरह से अधिकार किस तरीके दिया जा सकता है इसे सीमित नहीं किया गया है। इस मामले में अन्नपागोंडा बनाम संगडियाप्पा ([1]) में बॉम्बे हाई कोर्ट की पूर्ण पीठ द्वारा लिया गया mat कि "विधिवत अधिकृत" में ऋणी पक्ष के कृत्यों से विधिवत अधिकृत या कानून के बल से अथवा न्यायालय के आदेश से विधिवत अधिकृत भी शामिल होगा का अन्य उच्च न्यायालयों में भी पालन किया गया है (देखें: राशबिहारी बनाम आनंद राम([1]); रामचरण दास बनाम गया प्रसाद ([2]); लक्षुमनन बनाम सदयप्पा ([3]) और थंकम्मा बनाम कुन्हम्मा ([4]) और हमारी राय में यह कानून की सही स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है।

श्री झा ने आगे तर्क दिया है कि, किसी भी मामले में, कानून किसी संपत्ति के रिसीवर को संपत्ति से देय ऋण के सम्बन्ध में स्वीकृति देने के लिए अधिकृत नहीं करता है। इस प्रस्ताव के लिए वे बॉम्बे उच्च

न्यायालय के करीमभाई बनाम अहमदाली ([5]) में किये गये फैसले पर निर्भर रहे है। उस मामले में यह माना गया था कि एक आधिकारिक समनुदेशिती द्वारा दी गई स्वीकृति एक देनदार के एजेंट द्वारा दी स्वीकृतिके बराबर नहीं होगी। हालांकि यह मामला स्पष्ट रूप से रिसीवर के सम्बन्ध में नहीं है, श्री झा उसमें दिये गये तर्कों के आधार पर उस पर निर्भर रहे हैँ। प्रत्यर्थी की ओर से श्री सान्याल के द्वारा हमारा ध्यान लक्ष्मणन चेट्टी बनाम सदायप्पा चेट्टी ([6]) की ओर आकर्षित किया गया जिस में एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया है। श्री सान्याल ने तर्क दिया है कि संपत्ति से देय ऋण के संबंध में संपत्ति का प्राप्तकर्ता पूरी तरह से संपत्ति के मालिकों का प्रतिनिधित्व करता है और एक बार यह माना जाता है जो कि माना भी जाना चाहिए, कि प्राप्तकर्ता के पास ऋण का भुगतान करने का अधिकार था, श्री सान्याल का तर्क है कि यह आवश्यक रूप से माना जाना चाहिए कि ऋण के भुगतान के संबंध में प्राप्तकर्ता के कर्तव्यों के लिए आकस्मिक ऋण की स्वीकृति भी उसके अधिकार में है। इसलिए, उनका तर्क है कि प्रत्येक मामले में प्राप्तकर्ता द्वारा की गई स्वीकृति देनदार के विधिवत अधिकृत एजेंट द्वारा की गई स्वीकृति ही है।

उपरोक्त श्री झा के इस तर्क पर दोनों पक्षों के तर्कों का एक संक्षिप्त संकेत है कि रिसीवर के पास एस्टेट की ओर से ऋण स्वीकार करने का कोई अधिकार नहीं है। हालाँकि, वर्तमान अपील के प्रयोजन के लिए यह तय करना हमारे लिए अनावश्यक है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 19

के तहत् ऋण की स्वीकृति के प्रयोजनों के लिए क्या रिसीवर उस संपत्ति के मालिकों का एजेंट है, जिसका वह रिसीवर है।

वर्तमान मामले में मुकदमा 1919 के दूसरे पट्टे पर आधारित है जो तत्कालीन रिसीवर के पक्ष में निष्पादित किया गया था। जिन स्वीकृतियों के द्वारा परिसीमा को सुरक्षित रखे जाने का दावा किया गया है, वह संपत्ति के पिछले रिसीवर द्वारा दी गई है, जिसके माध्यम से अपीलकर्ता, जो वर्तमान रिसीवर है, ने ऋण का भुगतान करने के लिए अपनी देनदारी प्राप्त की है। इसलिए धारा 19 लागू होगी क्योंकि स्वीकृति उन पिछले प्राप्तकर्ताओं द्वारा व्यक्तिगत रूप से हस्ताक्षरित की गई है और वादी को स्पष्टीकरण के दूसरे भाग के लिए किसी सहारे की आवश्यकता नहीं है। इस स्थिति को वास्तव में श्री झा ने काफी हद तक स्वीकार कर लिया था, जो इस बात से सहमत थे कि इसके मद्देनजर हमारे लिए यह तय करना जरूरी नहीं है कि क्या किसी संपत्ति का प्राप्तकर्ता वास्तव में संपत्ति के मालिकों का एक एजेंट है जिसे स्वीकृतियों को देने के लिए परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के तहत् विधिवत अधिकृत किया गया है।

इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिन स्वीकृतियों पर वादी निर्भर रहा है वे परिसीमा अधिनियम की धारा 19 के तहत् स्वीकृतियां हैं और जिनसे 12 अगस्त, 1935 से पहले की अवधि के सम्बन्ध में

परिसीमा सुरक्षित रही है। इसलिए नीचे की अदालतों द्वारा प्रतिवादी की परिसीमा की याचिका को सही खारिज किया गया था।

चूंकि हमारे समक्ष उठाए गए दोनों तर्क विफल हो गए हैं, इसलिए अपील जुर्माने सहित खारिज की जाती है।

अपील खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी आदित्य वशिष्ठ (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।